'आराधनीया माँ'

–डॉ. भावना आचार्य
सह–आचार्य संस्कृत

सृष्टि के आरम्भ में परमात्मा ने अपने को दो रूपों में विभक्त किया, आधे से वे पुरुष और आधे से नारी हो गए। सृष्टि–संचालन में परमात्मा के इन दोनों रूपों का अपना महत्त्व है, एक के बिना दूसरा अधूरा है। पुरुष ने सदा ही नारी को अपनी अर्धांगिनी माना है। व्यवहार में भी पुरुष से नारी सदा उत्कृष्ट मानी गई। **महात्मा गांधी** ने नारी के सम्मान में कहा है कि ''इस धरती पर जो कुछ भी पवित्र और धार्मिक है, उसकी संरक्षक स्त्री है।''

त्याग और तपस्या की प्रतीक नारी के तीन रूप है – कन्या रूप, भार्या रूप और मातृरूप। इन सभी रूपों में नारी प्रेम और आदर की अधिकारिणी है। प्रकृति जैसे अपना सर्वस्व लुटाकर जगत् को, प्राणियों को सुख प्रदान करती है वैसे ही नारी भी सहनशील होकर सबका ध्यान रखते हुए निःस्वार्थ भाव से सुख लुटाने में ही प्रसन्न और सन्तुष्ट होती है। नारी के इन तीनों रूपों में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण और गौरवशाली स्वरूप है उसके मातृत्व में। नारी को मातृदेवता के रूप में उपस्थित कर हमारी संस्कृति में उसे वन्दनीया व पूजनीया माना गया है और कहा गया है **''मातृदेवो भव''**[1]। वही सृष्टि की उत्पादिका, प्रतिपालिका है और कष्ट में सान्त्वना देने वाली तथा कण्टकाकीर्ण मार्ग को सुगम बनाने का एकमात्र साधन भी वही है। इन्हीं विशेषताओं के कारण माँ को किसी एक परिभाषा में नहीं बांधा जा सकता, उसकी अनगिनत खूबियाँ हैं, जिसे साहित्य में सुन्दर उपमाओं से सदैव अलंकृत किया गया है। कवि जगदीश व्योम ने अपनी पंक्तियों में माँ की झलक का सुन्दर शब्दों में अद्भुत वर्णन किया हैं –

माँ कबीर की साखी जैसी,
तुलसी की चौपाई–सी,
माँ मीरा की पदावली–सी
माँ है ललित रुबाई–सी।
माँ वेदों की मूल चेतना
माँ गीता की वाणी–सी,
माँ त्रिपिटक के सिद्ध सूक्त–सी
लोकोत्तर कल्याणी–सी।
माँ द्वारे की तुलसी जैसी
माँ बरगद की छाया–सी,
माँ कविता की सहज वेदना
महाकाव्य की काया–सी।

श्रुति, स्मृति, पुराण, इतिहास आदि ग्रंथों में माँ की महिमा का गुणगान करते हुए कहा है कि माता का गौरव पिता से अधिक है क्योंकि संतान को गर्भ में धारण करके एवं विविध कष्ट सहकर

भी उसका पालन–पोषण करने में वह अपना सर्वस्व लुटा देती है। **मात्रा भवतु संमनाः।**[2] अहैतुक स्नेह करने वाली माँ ही है, जिसका प्रेम सन्तान पर जन्म से लेकर शव, बाल्य, यौवन एवं प्रौढ़ावस्था तक एक – सा ही बना रहता है। जन्मदाता और पालनकर्ता होने के कारण सब पूज्यों में पूज्यतम जनक और पिता कहलाता है। **उपाध्यायानदशाचार्य आचार्याणां शतं पिता।**

सहस्त्रं तु पितृन्माता गौरवेणातिरिच्यते।।[3]

जन्मदाता से भी अन्नदाता पिता श्रेष्ठ है। इनसे भी सौगुना श्रेष्ठ और वन्दनीय माता है। वही श्रेष्ठ गुरु भी है क्योंकि अपनी संतान को संस्कारित करने वाली, उसके व्यक्तित्व का निर्माण करने वाली भी वही है।

जनको जन्मदातृत्वात् पालनाच्च पिता स्मृतः।
गरीयान् जन्मदातुश्च योऽन्नदाता पिता मुने।।
तयोः शतगुणे माता पूज्या मान्या च वन्दिता।
गर्भधारणपोषाभ्यां सा च ताभ्यां गरीयसी।।[4]

स्वयं सब प्रकार के संकटो को उठाकर अपने बच्चे की सब प्रकार की विपत्तियों और कष्टों से रक्षा करती हुई प्रेम और आत्मत्याग द्वारा वह उसे शिक्षा देती है। वही सबसे योग्य पथ प्रदर्शक, तत्त्वज्ञानी और मित्र है। वात्सल्यमयी शतरूपा, कुन्ती, कौशल्या आदि श्रेष्ठ माताओं ने अपनी सन्तानों को सर्वथा अपने धर्म की पालन करने की उत्तम शिक्षा प्रदान की थी।

माता, जननी, धरित्री, त्रिभुवनश्रेष्ठा, आराधनीया आदि नामों को चरितार्थ करने वाली माँ के समान पूजनीय विभूति इस संसार में दूसरी नही है। पृथ्वी पर भगवान् की स्वरूपभूता माँ ही है। कहा भी गया है कि भगवान् सब जगह प्रकट नहीं हो सकते, इसलिए उन्होंने माता की सृष्टि की। तभी तो लोक में यह बात प्रसिद्ध है कि जब मनुष्य पर कोई संकट आता है तब वह माँ का ही स्मरण करता है और माँ अपने कष्ट भूलकर अपनी सन्तान पर आए हुए संकट का निवारण हँसते हुए करती है। इस भावना से अभिभूत होकर ही पाश्चात्य विद्वान **मैटरलिंक** ने कहा है कि ''अपने बच्चों को प्यार करते समय सभी माताएँ सम्पत्तिशालिनी हो जाती है।''

स्वार्थ का पूर्णतया त्याग और प्रेम का सर्वोत्कृष्ट रूप माँ के स्नेह में ही दिखाई देता है। एक प्रसिद्ध सूक्ति में भी कहा गया है कि सन्तान कुसन्तान हो सकती है पर माता कुमाता नहीं हो सकती। वह प्रेरणा देने वाली, पवित्र बनाने वाली और संयम सिखाने वाली शक्ति है। **नास्ति मातृसमो गुरुः।** [5] – अर्थात् माता के समान दूसरा कोई गुरु नहीं है। अनेक महान् और प्रसिद्ध व्यक्तियों ने भी अनी सफलता का सारा श्रेय अपनी आदरणीय माँ को ही दिया है क्योंकि उसकी कही गई हर एक बात, भविष्य–निर्माण के लिए और राह को आसान बनाने के लिए संतान को प्रेरित करती है। शायर–तफ़जील ताबिश ने कहा है –

माँ की बातों का भला किसको बुरा लगता है,
उसका हर लफ़्ज मुहब्बत लगता है, दुआ लगता है।

गंगा के समान पवित्र और हिम के समान निर्मल माँ की सेवा करने वाला व्यक्ति दीर्घायु, यश, स्वर्ग, कीर्ति, पुण्य, बल, लक्ष्मी, सुख, धन–धान्य सब कुछ प्राप्त कर सकता है क्योंकि माता का स्थान वस्तुतः स्वर्ग से भी ऊँचा है– **''जननी जन्भूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी।''** त्याग, तप और प्रेम की त्रिवेणी

माँ परिवार के लिए अमृत का भंडार है, एक पवित्र ज्योति है। त्याग जिसका स्वभाव, प्रदान जिसका धर्म, सहनशीलता जिसका व्रत और प्रेम जिसका जीवन है ऐसी महिमामयी माँ को बारम्बार नमन करते हुए सदा उसकी ममता की छाँव की कामना प्रत्येक संतान के मन में रहती है क्योंकि माँ एक शब्द ही नहीं बल्कि ममता और वात्सल्य का अथाह सागर है –

परहित–परचिन्तन में मन जिसका रमता,
दिन हो चाहे रात, न तन उसका थकता।
मृदु कर्मठ स्नेहमयी को नमन करें,
युगों मिले हमको ऐसी माँ की ममता।

संदर्भ सूची –

1. तैत्तिरीयोपनिषद् शिक्षावल्ली 1/11/2
2. अथर्ववेदं 3/30/2
3. मनुस्मृति 2/145
4. ब्रह्मवैवर्तपुराण गणेश॰ 40 अध्याय
5. बृहद् धर्मपुराण, पूर्वखण्ड, अध्याय 2, श्लोक 33

16–17 ''शान्ताकारम्''
शिव कॉलोनी, नोखा रोड़,
हिरण मगरी से.4,,
उदयपुर – 313002 (राज.)

––0––